

आधुनिक राष्ट्र-राज्य में युवाओं में मनोवैज्ञानिक तनाव और नशीली दवाओं का सेवन: एक ऐतिहासिक परिप्रेक्ष्य

डॉ विश्वजीत भारतीय

शिक्षक (मनोविज्ञान), पी.एम. श्री बसंत 10 +2 उच्च विद्यालय इटिम्हा करमा, ब्लॉक- नासरीगंज, जिला-
रोहतास (बिहार)

सारांश

यह शोध-पत्र आधुनिक राष्ट्र-राज्य की संरचना के भीतर युवाओं में मनोवैज्ञानिक तनाव और नशीले पदार्थों के सेवन के बीच जटिल संबंधों का विश्लेषण करता है, जिसमें भारतीय समाज को एक ऐतिहासिक अध्ययन के रूप में प्रस्तुत किया गया है। औपनिवेशिक काल से लेकर स्वतंत्रता-पश्चात भारत तक, समाजिक-राजनीतिक परिवर्तन, आर्थिक पुनर्संरचना और संस्कृतिक बदलावों ने निरंतर युवाओं के तनाव, चिंता और पहचान-संकट को आकार दिया है। यह अध्ययन तर्क देता है कि आधुनिकीकरण, तीव्र नगरीकरण, प्रतिस्पर्धात्मक शिक्षा प्रणाली, बेरोज़गारी और बदलती पारिवारिक संरचनाओं ने युवाओं पर मनोवैज्ञानिक दबाव को बढ़ा दिया है। ऐतिहासिक रूप से भारत में नशीले पदार्थों का उपयोग धार्मिक और औषधीय संदर्भों तक सीमित था; किंतु औपनिवेशिक नियमन और बाद में पूँजीवादी बाज़ार के विस्तार के कारण शराब, तंबाकू और मादक द्रव्यों का व्यवसायीकरण हुआ, जिससे वे समाजिक रूप से विघटनकारी बन गए। समकालीन राष्ट्र-राज्य में वैश्वीकरण, डिजिटल मीडिया और उपभोक्ता संस्कृति ने अप्राप्य आकांक्षाओं को बढ़ावा देकर तनाव को और तीव्र कर दिया है, जिसके परिणामस्वरूप कुछ युवा नशीले पदार्थों को तनाव से निपटने के साधन के रूप में अपनाते हैं। ऐतिहासिक अभिलेखों, नीतिगत दस्तावेज़ों और सार्वजनिक स्वास्थ्य रिपोर्टों जैसे द्वितीयक स्रोतों के आधार पर यह अध्ययन भारतीय युवाओं में नशे के स्वरूपों में क्षेत्रीय और समाजिक-आर्थिक विविधताओं को उजागर करता है। साथ ही, यह भारतीय राज्य की भूमिका का समालोचनात्मक मूल्यांकन करता है—विशेषकर कानूनी ढाँचे, शैक्षणिक सुधार, मानसिक स्वास्थ्य पहलों और नशामुक्ति कार्यक्रमों के संदर्भ में। ऐतिहासिक दृष्टिकोण अपनाते हुए यह शोध स्पष्ट करता है कि युवाओं में नशीले पदार्थों का सेवन केवल व्यक्तिगत विकृति

नहीं, बल्कि दीर्घकालिक समाजिक-राजनीतिक प्रक्रियाओं का संरचनात्मक परिणाम है। अंततः यह अध्ययन युवाओं के तनाव और नशे की समस्या से निपटने के लिए ऐतिहासिक रूप से सूचित, संस्कृतिक रूप से संवेदनशील और मनोवैज्ञानिक रूप से सुदृढ़ नीतिगत हस्तक्षेपों की आवश्यकता पर बल देता है।

कुंजी शब्द: मनोवैज्ञानिक तनाव; नशीले पदार्थों का सेवन; युवा; राष्ट्र-राज्य; भारतीय समाज; ऐतिहासिक परिप्रेक्ष्य

1. भूमिका

1.1 युवा, मनोवैज्ञानिक तनाव और आधुनिक राष्ट्र-राज्य

युवा किसी भी राष्ट्र-राज्य के लिए समाजिक, आर्थिक और राजनीतिक ऊर्जा का प्रमुख स्रोत होते हैं। आधुनिक राष्ट्र-राज्य में युवाओं को विकास, नवाचार और राष्ट्रीय प्रगति के प्रेरक के रूप में देखा जाता है। भारत जैसे विकासशील देश में, जहाँ जनसंख्या का बड़ा भाग युवा है, युवाओं की मानसिक स्थिति सीधे राज्य की स्थिरता और विकास से जुड़ी हुई है। मनोवैज्ञानिक तनाव अब केवल व्यक्तिगत या चिकित्सीय समस्या नहीं रह गया है, बल्कि यह आधुनिक राज्य की संरचनाओं—जैसे शिक्षा, श्रम बाजार और शासन व्यवस्था—से उत्पन्न होने वाली एक समाजिक परिघटना बन चुका है।

सैद्धांतिक रूप से, दुर्खीम (1897) का एनोमी सैद्धांतिक यह समझाने में सहायक है कि जब समाजिक मानदंड और अपेक्षाएँ कमजोर पड़ती हैं, तो व्यक्ति मानसिक असंतुलन और विचलन की ओर अग्रसर होता है। आधुनिक भारतीय राष्ट्र-राज्य में तीव्र समाजिक परिवर्तन ने युवाओं के लिए ऐसे ही एनोमिक हालात उत्पन्न किए हैं, जहाँ नशीली पदार्थों का सेवन एक coping mechanism (तनाव से निपटने का साधन) के रूप में उभरता है। [1]

1.2 ऐतिहासिक जड़ें: औपनिवेशिक विरासत और भारत में युवा तनाव

भारतीय समाज में मनोवैज्ञानिक तनाव और नशीले पदार्थों के उपयोग की ऐतिहासिक जड़ें औपनिवेशिक काल से जुड़ी हैं। पूर्व-औपनिवेशिक भारत में समाजिक जीवन अपेक्षाकृत सामुदायिक था, जहाँ संयुक्त परिवार, जाति-आधारित नेटवर्क और धार्मिक-संस्कृतिक संस्थाएँ सामूहिक रूप से मानसिक तनाव का प्रबंधन करती थीं। नशीले पदार्थों का उपयोग सीमित, नियंत्रित और संस्कृतिक रूप से विनियमित था। औपनिवेशिक शासन ने भारतीय अर्थव्यवस्था और समाज पर गहरा प्रभाव डाला। ब्रिटिश नीतियों के कारण कृषि संकट, बेरोज़गारी और समाजिक विस्थापन बढ़ा, जिससे युवाओं में असुरक्षा और तनाव में वृद्धि हुई। अफीम और शराब जैसी वस्तुओं का व्यवसायीकरण किया गया, जिन्हें औपनिवेशिक राज्य ने राजस्व स्रोत के रूप में उपयोग किया (Arnold, 1988)। इस ऐतिहासिक प्रक्रिया ने नशीले पदार्थों के

सेवन को समाजिक-आर्थिक संकट से जोड़ दिया, जिसके प्रभाव आज भी भारतीय युवाओं में देखे जा सकते हैं। [2][3]

1.3 स्वतंत्रता-उत्तर भारतीय राज्य और विकासजनित तनाव

1947 के बाद भारतीय राज्य ने युवाओं को “राष्ट्र-निर्माता” के रूप में परिभाषित किया। नेहरूवादी विकास मॉडल ने शिक्षा, विज्ञान और औद्योगिकरण को प्राथमिकता दी। इससे अवसर बढ़े, लेकिन साथ ही प्रतिस्पर्धा, प्रदर्शन दबाव और असफलता की चिंता भी बढ़ी। मर्टन (1938) के तनाव सिद्धांत के अनुसार, जब संस्कृतिक लक्ष्य (सफलता, रोजगार, सामाजिक प्रतिष्ठा) और उन्हें प्राप्त करने के साधन सीमित होते हैं, तो व्यक्ति विचलित व्यवहार की ओर झुकता है।

यह तनाव विशेष रूप से भारत के युवाओं में स्पष्ट है, जहाँ उच्च शिक्षा के बावजूद बेरोज़गारी और अल्प-रोज़गारी आम है। यह संरचनात्मक तनाव कई युवाओं को नशीली पदार्थों की लत की ओर धकेलता है, जिससे यह स्पष्ट होता है कि नशीली पदार्थों का सेवन समाजिक असमानता का परिणाम है, न कि केवल व्यक्तिगत कमजोरी। [4][5]

1.4 उदारीकरण, वैश्वीकरण और युवा पहचान का संकट

1990 के बाद आर्थिक उदारीकरण और वैश्वीकरण ने भारतीय राष्ट्र-राज्य और युवाओं के संबंध को रूपांतरित कर दिया। बाज़ार-प्रधान व्यवस्था में राज्य की कल्याणकारी भूमिका कमजोर हुई और युवाओं से आत्मनिर्भर, प्रतिस्पर्धी और लचीला बनने की अपेक्षा की गई। बेक (1992) के जोखिम समाज सिद्धांत के अनुसार, आधुनिक समाज में व्यक्ति को अपने जोखिम स्वयं प्रबंधित करने पड़ते हैं।

भारतीय युवाओं के लिए यह जोखिम नौकरी की असुरक्षा, प्रवासन और समाजिक तुलना के रूप में सामने आता है। सोशल मीडिया और उपभोक्ता संस्कृति ने सफलता के अवास्तविक मानक स्थापित किए हैं, जिससे मनोवैज्ञानिक तनाव और पहचान संकट बढ़ा है। इस संदर्भ में नशीली पदार्थों का सेवन तनाव से अस्थायी राहत का साधन बन जाता है। [6]

1.5 भारतीय राज्य की प्रतिक्रिया: शासन, नियंत्रण और देखभाल

भारतीय राज्य ने एनडीपीएस अधिनियम (1985), राष्ट्रीय मानसिक स्वास्थ्य कार्यक्रम और युवा-केंद्रित योजनाओं के माध्यम से नशीली पदार्थों और मानसिक स्वास्थ्य की समस्या से निपटने का प्रयास किया है। किंतु ये नीतियाँ मुख्यतः जैव-चिकित्सीय और कानूनी दृष्टिकोण पर आधारित हैं। फूको (1978) के अनुसार, आधुनिक राज्य सामाजिक समस्याओं को “अनुशासन और नियंत्रण” के माध्यम से नियंत्रित करता है, जिससे संरचनात्मक कारण अक्सर अनदेखे रह जाते हैं। [7]

भारतीय शासन ढांचे में युवा तनाव को प्रायः नैतिक विफलता या कानून-व्यवस्था की समस्या के रूप में देखा जाता है, जबकि इसके ऐतिहासिक और समाजिक-आर्थिक कारणों पर पर्याप्त ध्यान नहीं दिया

जाता। [8]

1.6 ऐतिहासिक-सैद्धांतिक समझ की ओर

यह अध्ययन तर्क देता है कि भारतीय युवाओं में मनोवैज्ञानिक तनाव और नशीली पदार्थों का सेवन आधुनिक राष्ट्र-राज्य की ऐतिहासिक संरचनाओं का परिणाम है। औपनिवेशिक विरासत, विकासात्मक राज्य और नवउदारवादी सुधार—तीनों ने मिलकर युवाओं को ऐसे वातावरण में रखा है जहाँ अपेक्षाएँ अत्यधिक हैं और संसाधन सीमित।

अतः युवाओं में नशीली पदार्थों के सेवन को व्यक्तिगत विकृति के बजाय ऐतिहासिक रूप से निर्मित संरचनात्मक स्थिति के रूप में समझना आवश्यक है। यह दृष्टिकोण भारतीय समाज में अधिक समावेशी, सांस्कृतिक रूप से संवेदनशील और युवा-केंद्रित नीतियों के निर्माण का मार्ग प्रशस्त करता है। [9][10]

2. साहित्य समीक्षा

2.1 आधुनिकता, युवा तनाव और वैश्विक दृष्टिकोण

अंतरराष्ट्रीय स्तर पर, युवा तनाव को आधुनिकता के एक संरचनात्मक उत्पाद के रूप में समझा गया है। गिडन्स (1991) और बेक (1992) के अनुसार, उन्नत आधुनिक समाजों में व्यक्तियों को अनिश्चितता, जोखिम और आत्म-उत्तरदायित्व के निरंतर दबाव के तहत जीना पड़ता है। युवा, जो शिक्षा, रोजगार और पहचान निर्माण के संक्रमणकालीन चरण में होते हैं, इन दबावों से सबसे अधिक प्रभावित होते हैं। [6][11]

WHO (2014) और UNODC (2021) की रिपोर्ट्स से यह पता चलता है कि वैश्विक स्तर पर युवा मानसिक स्वास्थ्य समस्याओं और पदार्थों के उपयोग के बीच मजबूत संबंध है। [12][13] कई अध्ययनों (हॉकिन्स एट अल., 1992; सिन्हा, 2008) ने यह प्रमाणित किया है कि मानसिक तनाव, चिंता और अवसाद पदार्थों के दुरुपयोग के प्रमुख पूर्वसूचक हैं, खासकर उन समाजों में जहाँ समाजिक सुरक्षा प्रणाली कमजोर होती है। [14][15]

2.2 क्लासिकल समाजशास्त्र सिद्धांत और पदार्थ दुरुपयोग

क्लासिकल समाजशास्त्र सिद्धांतों का उपयोग साहित्य में पदार्थ दुरुपयोग को समझने के लिए किया गया है। डुर्हेम (1897) ने अणोमी (अनियमितता) की अवधारणा के माध्यम से यह समझाया कि जब समाजिक मानक कमजोर होते हैं, तो व्यक्ति भटकाव की ओर बढ़ते हैं। बाद के अध्ययन (क्लिनाई और मियर, 2016) ने युवा पदार्थ दुरुपयोग को अणोमिक परिस्थितियों से जोड़ा। [1][16] मर्टन (1938) का स्ट्रेन सिद्धांत स्पष्ट करता है कि जब सांस्कृतिक लक्ष्य (सफलता, प्रतिष्ठा) और उन्हें प्राप्त करने के साधन असमान होते हैं, तो व्यक्ति वैकल्पिक और कभी-कभी अवैध मार्गों का सहारा लेते

हैं। [4] भारतीय संदर्भ में, बीटेल (2002) और देशपांडे (2017) ने शिक्षा और रोजगार में असमानताओं को युवा निराशा और विकृत व्यवहार से जोड़ा है। [5][17]

2.3 भारत में नशीले पदार्थों का ऐतिहासिक अध्ययन

भारत में पदार्थ उपयोग पर ऐतिहासिक अध्ययन बताते हैं कि उपनिवेश काल से पहले, मादक पदार्थों का उपयोग सीमित, संस्कृतिक और धार्मिक था (सिन्हा, 2001)। [18] अर्नोल्ड (1988) और मिल्स (2000) ने यह दिखाया कि उपनिवेशी राज्य ने अफीम और शराब को राजस्व के स्रोत के रूप में व्यावसायीकरण किया, जिसके कारण पदार्थ उपयोग सामाजिक नियंत्रण से बाहर हो गया। [2][19] उपनिवेशोत्तर अध्ययन (गंगरेड, 1978; प्रकाश, 1999) का तर्क है कि उपनिवेशी धरोहर ने न केवल आर्थिक असुरक्षा पैदा की, बल्कि पारंपरिक समाजिक गतिशीलता के मार्गों को भी बाधित किया, जिससे युवाओं के लिए तनाव और लत की संरचनात्मक नींव रखी गई। [20][21]

2.4 स्वतंत्रता-पश्चात भारत: विकास, शिक्षा और तनाव

स्वतंत्रता प्राप्ति के बाद भारत पर उपलब्ध साहित्य (कोठारी, 1989; रुदोल्फ, एल. आई., और रुदोल्फ, एस. एच., 2001; फर्नांडीस, 2006) में युवाओं को "राष्ट्र निर्माता" के रूप में देखा गया है, लेकिन यह भी दिखाया गया है कि विकास-केंद्रित नीतियों ने प्रतिस्पर्धा और प्रदर्शन के दबाव को बढ़ा दिया है। फर्नांडीस (2006) ने यह जोर दिया कि शिक्षा के तीव्र विस्तार और आर्थिक विकास ने युवाओं से उच्च उम्मीदें पैदा कीं, जिसने तनाव, चिंता और निराशा में योगदान दिया। [22][23][24]

NCRB (2022) और समाजिक न्याय मंत्रालय की रिपोर्ट्स से पता चलता है कि शिक्षित, बेरोजगार युवाओं में पदार्थ दुरुपयोग की दर अपेक्षाकृत अधिक है। [25] यह निष्कर्ष मर्टन के स्ट्रेन सिद्धांत को सामर्थ्य प्रदान करता है। भारतीय मानसिक अध्ययन (वर्मा और सरस्वती, 2002) ने भी शैक्षिक तनाव को युवा मानसिक स्वास्थ्य संकट का केंद्रीय तत्व पहचाना है। [26]

2.5 उदारीकरण, वैश्वीकरण और युवा पहचान संकट

1990 के बाद के साहित्य में (फर्नांडीस, 2006; लुकोस, 2009) यह दिखाया गया है कि नवउदारवादी सुधारों ने युवाओं की आकांक्षाओं को एक वैश्विक उपभोक्ता संस्कृति से जोड़ा। [24][27] बेक (1992) के जोखिम समाज सिद्धांत के अनुसार, भारतीय युवा अब नौकरी की असुरक्षा, प्रवास और आत्म-मूल्यांकन के दबाव में हैं। [6][27]

डिजिटल मीडिया पर हालिया अध्ययन (ट्वेंग, 2017; NIMHANS, 2020) ने यह सुझाव दिया है कि सोशल मीडिया चिंता, आत्म-सम्मान में कमी और भागीदारी से बचने वाले पदार्थ दुरुपयोग को बढ़ावा देता है। इस प्रकार, वैश्वीकरण और डिजिटलीकरण ने युवा तनाव को बहुआयामी बना दिया है। [12][28]

2.6 राज्य, शासन और नियंत्रण- आधारित दृष्टिकोण

भारतीय राज्य की प्रतिक्रिया पर केंद्रित साहित्य (बासु, 2013; राव, 2019) ने संकेत दिया है कि NDPS अधिनियम (1985) और मानसिक स्वास्थ्य नीतियाँ मुख्य रूप से दंडात्मक और जैव-चिकित्सीय दृष्टिकोण पर आधारित हैं। [3][8][10]

फुकू (1978) के शासन की सरकारीता सिद्धांत के अनुसार, राज्य पदार्थ दुरुपयोग को एक अनुशासन और नियंत्रण के मुद्दे के रूप में देखता है, न कि एक समाजिक संकट के रूप में। हालिया नीति आलोचनाएँ (पटेल एट अल., 2018) यह उजागर करती हैं कि पुनः व्यसन कार्यक्रमों का प्रभाव सीमित होगा जब तक युवा तनाव के संरचनात्मक और ऐतिहासिक कारणों को समझा नहीं जाता। [7] [29]

2.7 साहित्य से पहचानी गई अनुसंधान में अंतर

उपलब्ध साहित्य यह स्पष्ट रूप से दर्शाता है कि:

- अधिकांश अध्ययन मानसिक या चिकित्सा दृष्टिकोण तक सीमित हैं।
- ऐतिहासिक निरंतरता (औपनिवेशिक-पोस्ट औपनिवेशिक-नवउदारवादी) को सामान्य रूप से समग्र तरीके से नहीं देखा गया है।
- अध्ययन जो यह मानते हैं कि युवा पदार्थ दुरुपयोग राष्ट्र-राज्य की संरचनात्मक विफलताओं का परिणाम है, अपेक्षाकृत दुर्लभ हैं।

वर्तमान अनुसंधान इन अंतरालों को संबोधित करने का प्रयास करता है।

3. शोध उद्देश्य

इस शोध-पत्र के प्रमुख उद्देश्य निम्नलिखित हैं:

3.1 आधुनिक राष्ट्र-राज्य के ढांचे के अंतर्गत युवाओं द्वारा अनुभव किए जा रहे मनोवैज्ञानिक तनाव को समझना

इस अध्ययन का उद्देश्य यह विश्लेषण करना है कि आधुनिक राष्ट्र-राज्य की संस्थाएँ—जैसे शिक्षा प्रणाली, श्रम बाजार, शासन संरचनाएँ तथा विकास मॉडल—भारतीय युवाओं के मानसिक तनाव को किस प्रकार उत्पन्न करती हैं तथा उसे और अधिक तीव्र बनाती हैं।

3.2 भारत में युवाओं के बीच मादक द्रव्यों के सेवन की ऐतिहासिक जड़ों का विश्लेषण करना

यह शोध भारत में मादक पदार्थों के उपयोग के पैटर्न में आए ऐतिहासिक परिवर्तनों को समझने का प्रयास करता है, जिसमें औपनिवेशिक काल से लेकर स्वतंत्रता-उपरांत तथा उदारीकरण के दौर तक के बदलाव शामिल हैं।

3.3 मनोवैज्ञानिक तनाव और मादक द्रव्य सेवन के बीच संरचनात्मक संबंध को स्पष्ट करना

यह अध्ययन यह स्थापित करने का प्रयास करता है कि युवाओं में मादक द्रव्यों का सेवन केवल व्यक्तिगत कमजोरी का परिणाम नहीं है, बल्कि यह समाजिक, आर्थिक एवं राजनीतिक तनावों से उत्पन्न

‘एक संरचनात्मक समस्या है।

3.4 समाजशास्त्रीय एवं मनोवैज्ञानिक सिद्धांतों का उपयोग करना

दुर्कीम के ‘एनामी सिद्धांत’, मर्टन के ‘स्ट्रेन सिद्धांत’ तथा बेक के ‘जोखिम समाज सिद्धांत’ के माध्यम से यह शोध यह समझने का प्रयास करता है कि आधुनिक सामाजिक परिवर्तन किस प्रकार युवाओं को तनाव और मादक द्रव्य सेवन की ओर धकेलते हैं।

3.5 उत्तर-औपनिवेशिक भारतीय राज्य की भूमिका का समालोचनात्मक मूल्यांकन करना

इस शोध का उद्देश्य एनडीपीएस अधिनियम (NDPS Act), राष्ट्रीय मानसिक स्वास्थ्य कार्यक्रम तथा अन्य राज्य नीतियों की प्रभावशीलता और सीमाओं का विश्लेषण करना है, विशेष रूप से युवाओं के मानसिक स्वास्थ्य के संदर्भ में।

3.6 वैश्वीकरण, उपभोक्तावाद एवं डिजिटल संस्कृति के प्रभावों का अध्ययन करना

यह अध्ययन यह समझने का प्रयास करता है कि सोशल मीडिया, उपभोक्ता संस्कृति तथा वैश्विक प्रतिस्पर्धा किस प्रकार युवाओं में पहचान संकट, सामाजिक तुलना एवं मानसिक दबाव को बढ़ावा देती है।

3.7 क्षेत्रीय एवं समाजिक-आर्थिक असमानताओं को उजागर करना

इस शोध का उद्देश्य यह दर्शाना है कि भारत में युवाओं के बीच मादक द्रव्य सेवन की समस्या किस प्रकार वर्ग, क्षेत्र, रोजगार की स्थिति तथा शैक्षणिक पृष्ठभूमि के अनुसार भिन्न-भिन्न रूप लेती है।

3.8 ऐतिहासिक रूप से सूचित एवं संस्कृतिक रूप से संवेदनशील नीतियों की आवश्यकता को रेखांकित करना

अंततः, यह शोध ऐसे नीतिगत सुझाव प्रस्तुत करने का उद्देश्य रखता है जो केवल कानूनी या चिकित्सकीय न होकर ऐतिहासिक, मनोवैज्ञानिक एवं सामाजिक रूप से समावेशी हों।

4. शोध पद्धति

4.1 अनुसंधान दृष्टिकोण एवं अध्ययन की प्रकृति

प्रस्तुत अध्ययन आधुनिक राष्ट्र-राज्य के ढांचे के अंतर्गत युवाओं के बीच मनोवैज्ञानिक तनाव और मादक द्रव्य सेवन के बीच संबंध की जांच हेतु गुणात्मक, ऐतिहासिक एवं सैद्धांतिक अनुसंधान दृष्टिकोण को अपनाता है। यह अध्ययन प्रकृति में अन्वेषणात्मक एवं व्याख्यात्मक है, जिसका उद्देश्य युवाओं में मादक द्रव्यों के सेवन को किसी व्यक्तिगत या रोगात्मक समस्या के रूप में नहीं, बल्कि ऐतिहासिक, राजनीतिक एवं आर्थिक रूपांतरणों से निर्मित एक संरचनात्मक सामाजिक परिघटना के रूप में समझना है।

भारतीय समाज में तनाव एवं मादक द्रव्य उपयोग के पैटर्न के दीर्घकालिक विकास को ध्यान में रखते हुए, द्वितीयक स्रोतों पर आधारित एक गैर-अनुभवजन्य (Non-Empirical), संकल्पनात्मक पद्धति को सर्वाधिक उपयुक्त माना गया है। यह दृष्टिकोण औपनिवेशिक काल से लेकर उदारीकरणोत्तर भारत तक निरंतरताओं एवं विच्छेदों का अनुकरण (ट्रेस) करने में सहायक है।

4.2 अनुसंधान अभिकल्पना: ऐतिहासिक-समाजशास्त्रीय ढांचा

यह शोध एक ऐतिहासिक-समाजशास्त्रीय अनुसंधान अभिकल्पना का अनुसरण करता है, जिसमें समाजशास्त्रीय सिद्धांतों को मनोवैज्ञानिक अंतर्दृष्टियों के साथ समेकित किया गया है। अध्ययन को कालबद्ध ऐतिहासिक विश्लेषण के आधार पर संगठित किया गया है, जिसमें भारतीय सामाजिक विकास को तीन व्यापक चरणों में विभाजित किया गया है:

1. **औपनिवेशिक चरण (1947 से पूर्व):** जिसकी विशेषता आर्थिक विस्थापन, मादक द्रव्यों (अफीम, शराब) के व्यवसायीकरण तथा औपनिवेशिक शासन के अंतर्गत युवाओं के बीच संरचनात्मक असुरक्षा के उद्भव से है।

2. **स्वतंत्रता-उपरांत विकासात्मक चरण (1947-1990):** जिसमें राष्ट्र-निर्माण की विचारधाराएँ, शिक्षा का विस्तार तथा राज्य-नेतृत्व वाले विकास मॉडल के अंतर्गत युवाओं पर बढ़ता प्रतिस्पर्धात्मक दबाव प्रमुख विशेषताएँ हैं।

3. **उदारीकरण एवं वैश्वीकरण चरण (1990 के पश्चात):** जिसकी पहचान नव-उदारवादी सुधारों, कल्याणकारी तंत्रों के कमजोर होने, डिजिटलीकरण, उपभोक्ता संस्कृति तथा जोखिम, अनिश्चितता और पहचान संकट से उत्पन्न बढ़ते मनोवैज्ञानिक तनाव से होती है।

यह अभिकल्पना युवाओं के तनाव एवं मादक द्रव्य सेवन को भारतीय राष्ट्र-राज्य के ऐतिहासिक विकास में निहित एक दीर्घकालिक प्रक्रिया के रूप में समझने में सक्षम बनाती है।

4.3 सैद्धांतिक ढांचा

यह अध्ययन शास्त्रीय एवं समकालीन सामाजिक सिद्धांतों को समेकित करते हुए एक अंतर्विषयक सैद्धांतिक ढांचे का उपयोग करता है:

1. **दुर्कीम का एनामी सिद्धांत (1897):** इस सिद्धांत का उपयोग यह स्पष्ट करने के लिए किया गया है कि तीव्र सामाजिक परिवर्तन एवं मानक संरचनाओं के क्षरण से किस प्रकार मनोवैज्ञानिक अस्थिरता उत्पन्न होती है, जो युवाओं को मादक द्रव्य सेवन जैसे विचलित अनुकूलन (deviant coping mechanisms) की ओर प्रवृत्त करती है।

2. **मर्टन का स्ट्रेन सिद्धांत (1938):** इसका प्रयोग संस्कृतिक रूप से निर्धारित लक्ष्यों (सफलता, रोजगार, प्रतिष्ठा) और सीमित संस्थागत साधनों के बीच उत्पन्न विसंगति से युवाओं में उत्पन्न संरचनात्मक तनाव के विश्लेषण हेतु किया गया है।

3. **बेक का जोखिम समाज सिद्धांत (1992):** यह सिद्धांत यह अवधारणात्मक समझ प्रदान करता है कि वैश्वीकरण एवं नव-उदारवादी शासन व्यवस्था किस प्रकार जोखिम एवं उत्तरदायित्व का भार राज्य से स्थानांतरित कर व्यक्तियों पर डाल देती है, जिससे युवाओं में चिंता एवं असुरक्षा तीव्र होती है।

4. **फूको की 'गवर्नमेंटैलिटी' की अवधारणा (1978):** यह अवधारणा एनडीपीएस अधिनियम एवं मानसिक स्वास्थ्य कार्यक्रमों जैसे राज्य हस्तक्षेपों को संरचनात्मक परिवर्तन के बजाय विनियमन एवं नियंत्रण की युक्तियों के रूप में समालोचनात्मक दृष्टि से विश्लेषित करने में सहायक है।

समेकित रूप से, ये सिद्धांत मादक द्रव्य सेवन को आधुनिक शासन प्रणाली द्वारा ऐतिहासिक रूप से निर्मित एक परिणाम के रूप में समझने का व्यापक व्याख्यात्मक ढांचा प्रदान करते हैं।

4.4 आंकड़ों के स्रोत

यह अध्ययन पूर्णतः द्वितीयक आंकड़ों पर आधारित है, जिन्हें निम्नलिखित अंतर्विषयक एवं प्रमाणिक स्रोतों से संकलित किया गया है:

- औपनिवेशिक अर्थव्यवस्था एवं मादक द्रव्य विनियमन पर ऐतिहासिक ग्रंथ
- सरकारी नीतिगत दस्तावेज (एनडीपीएस अधिनियम, राष्ट्रीय मानसिक स्वास्थ्य कार्यक्रम, युवा नीति रिपोर्टें)
- एनसीआरबी, स्वास्थ्य एवं परिवार कल्याण मंत्रालय तथा डब्ल्यूएचओ से प्राप्त सार्वजनिक स्वास्थ्य एवं अपराध संबंधी आंकड़े
- समाजशास्त्र, मनोविज्ञान, इतिहास एवं सार्वजनिक स्वास्थ्य से संबंधित पीयर-रिव्यू शोध पत्रिकाएँ
- यूएनओडीसी एवं यूनिसेफ जैसी अंतरराष्ट्रीय एजेंसियों की रिपोर्टें

द्वितीयक आंकड़ों पर निर्भरता विभिन्न क्षेत्रों एवं कालखंडों में व्यापक स्तर पर ऐतिहासिक एवं नीतिगत विश्लेषण को संभव बनाती है।

4.5 आंकड़ा विश्लेषण की विधि

आंकड़ों का विश्लेषण गुणात्मक विषय-वस्तु विश्लेषण (Qualitative Content Analysis) एवं थीमैटिक व्याख्या के माध्यम से किया गया है। प्रमुख विश्लेषणात्मक विषय—जैसे मनोवैज्ञानिक तनाव, बेरोजगारी, शैक्षिक दबाव, पहचान संकट, मादक द्रव्यों का व्यवसायीकरण तथा राज्य विनियमन—को विभिन्न ऐतिहासिक चरणों में चिन्हित कर विश्लेषित किया गया है।

राज्य नीतियों एवं सामाजिक संरचनाओं में आए परिवर्तनों की पहचान हेतु तुलनात्मक ऐतिहासिक विधि का प्रयोग किया गया है, जबकि युवाओं में मादक द्रव्य सेवन से निपटने हेतु राज्य की प्रतिक्रियाओं की प्रभावशीलता एवं सीमाओं के मूल्यांकन के लिए समालोचनात्मक नीतिगत विश्लेषण अपनाया गया है।

4.6 केस स्टडी का चयन: एक राष्ट्र-राज्य के रूप में भारत

भारत को एक ऐतिहासिक केस स्टडी के रूप में चुना गया है क्योंकि इसका औपनिवेशिक अनुभव, उत्तर-औपनिवेशिक राष्ट्र-निर्माण तथा नव-उदारवादी वैश्वीकरण का विशिष्ट इतिहास रहा है। भारत में युवाओं की जनसांख्यिकीय महत्ता तथा क्षेत्रीय एवं समाजिक-आर्थिक विविधता इसे संरचनात्मक तनाव एवं मादक द्रव्य सेवन के विश्लेषण हेतु एक उपयुक्त अध्ययन क्षेत्र बनाती है।

किसी एक क्षेत्र पर केंद्रित होने के बजाय, यह अध्ययन राष्ट्रीय स्तर के साक्ष्यों का समेकन करते हुए वर्ग, क्षेत्र एवं रोजगार-आधारित विविधताओं को रेखांकित करता है।

4.7 नैतिक विचार

चूंकि यह शोध द्वितीयक स्रोतों पर आधारित है, इसमें प्रत्यक्ष मानव सहभागिता सम्मिलित नहीं है। नैतिक उत्तरदायित्व का निर्वहन युवाओं के प्रति किसी भी प्रकार के कलंक से बचते हुए तथा मादक द्रव्य सेवन को नैतिक या व्यक्तिगत विफलता के बजाय एक समाजिक-संरचनात्मक समस्या के रूप में प्रस्तुत करके किया गया है।

4.8 पद्धतिगत सीमाएँ

प्राथमिक अनुभवजन्य आंकड़ों के अभाव के कारण सूक्ष्म स्तर के मनोवैज्ञानिक आकलन की सीमाएँ विद्यमान हैं। इसके अतिरिक्त, द्वितीयक आंकड़े हाशिए पर स्थित युवाओं में मादक द्रव्य सेवन की वास्तविक स्थिति को कम दर्शा सकते हैं। तथापि, ये सीमाएँ अध्ययन के उस उद्देश्य को बाधित नहीं करतीं, जिसका लक्ष्य ऐतिहासिक रूप से सुदृढ़ संरचनात्मक व्याख्या प्रस्तुत करना है।

4.9 पद्धतिगत महत्व

यह अनुसंधान पद्धति इतिहास, समाजशास्त्र, मनोविज्ञान एवं राजनीतिक विश्लेषण के मध्य सेतु का कार्य करती है तथा आधुनिक भारतीय राष्ट्र-राज्य के संदर्भ में युवाओं के तनाव एवं मादक द्रव्य सेवन की एक समग्र एवं बहुआयामी समझ प्रदान करती है।

5. परिणाम एवं चर्चा

5.1 भारत में युवाओं के तनाव एवं मादक द्रव्य उपयोग के ऐतिहासिक प्रतिरूप

अध्ययन का ऐतिहासिक विश्लेषण यह स्पष्ट रूप से दर्शाता है कि भारत में युवाओं के बीच मनोवैज्ञानिक तनाव एवं मादक द्रव्य सेवन कोई नवीन या आकस्मिक संकट नहीं है, बल्कि यह एक समाजिक समस्या है जो आधुनिक राष्ट्र-राज्य के विकास के साथ-साथ क्रमिक रूप से विकसित हुई है।

परिणाम 1

औपनिवेशिक काल से लेकर समकालीन भारत तक, प्रत्येक ऐतिहासिक चरण में युवाओं का तनाव समाजिक-आर्थिक परिवर्तनों से गहराई से जुड़ा रहा है।

- औपनिवेशिक शासन ने आर्थिक असुरक्षा एवं विस्थापन को जन्म दिया।
- उत्तर-औपनिवेशिक काल में विकास एवं राष्ट्र-निर्माण की प्रक्रियाओं ने प्रतिस्पर्धा एवं अपेक्षाओं को बढ़ाया।
- उदारीकरणोत्तर काल में अनिश्चितता, जोखिम एवं पहचान संकट ने तनाव को और अधिक तीव्र कर दिया।

विमर्श 1

यह परिणाम दुर्कीम के एनामी सिद्धांत की पुष्टि करता है, जिसके अनुसार तीव्र सामाजिक परिवर्तन युवाओं को मानक-विहीनता की अवस्था में धकेल देता है, जहाँ मादक द्रव्य सेवन एक प्रकार के “अनुकूलन तंत्र (Coping Mechanism)” के रूप में उभरता है।

5.2 मादक द्रव्य उपयोग का रूपांतरण: अनुष्ठान से बाज़ार वस्तु तक

परिणाम 2

भारत में मादक द्रव्यों का उपयोग ऐतिहासिक रूप से तीन विशिष्ट चरणों से होकर गुज़रा है:

ऐतिहासिक चरण	मादक द्रव्य उपयोग की प्रकृति	सामाजिक नियंत्रण
पूर्व-औपनिवेशिक	धार्मिक/औषधीय, सीमित उपयोग	सांस्कृतिक एवं समुदाय-आधारित
औपनिवेशिक	व्यावसायिक (अफीम, शराब)	राज्य-राजस्व आधारित
1990 के बाद	उपभोक्तावादी, अवैध एवं मनोरंजनात्मक	कमजोर सामाजिक नियंत्रण

विमर्श 2

औपनिवेशिक राज्य द्वारा अफीम एवं शराब के व्यावसायीकरण (Arnold, 1988) ने मादक द्रव्य उपयोग को सामाजिक संरचना से अलग कर बाज़ार से जोड़ दिया। समकालीन पूंजीवादी संस्कृति ने इस प्रक्रिया को और तीव्र किया है। यह स्पष्ट रूप से दर्शाता है कि मादक द्रव्य सेवन कोई व्यक्तिगत नैतिक विफलता नहीं, बल्कि एक ऐतिहासिक-आर्थिक संरचना का परिणाम है।

5.3 शिक्षा, रोजगार एवं संरचनात्मक तनाव

परिणाम 3

अध्ययन से यह उजागर हुआ कि शिक्षा एवं रोजगार व्यवस्था युवाओं के लिए तनाव का एक प्रमुख स्रोत बन चुकी है।

संरचनात्मक क्षेत्र	तनाव के स्रोत	परिणाम
शिक्षा व्यवस्था	परीक्षा दबाव, प्रतिस्पर्धा	चिंता, अवसाद
श्रम बाज़ार	बेरोजगारी, अस्थिर रोजगार	असुरक्षा
सामाजिक अपेक्षाएँ	“सफल युवा” की छवि	आत्म-संदेह

विमर्श 3

यह परिणाम मर्टन के स्ट्रेन सिद्धांत की पुष्टि करता है। जब सामाजिक लक्ष्य (सफलता, स्थायी रोजगार) उपलब्ध साधनों से मेल नहीं खाते, तब युवाओं में विचलन एवं मादक द्रव्य सेवन की प्रवृत्ति बढ़ जाती है।

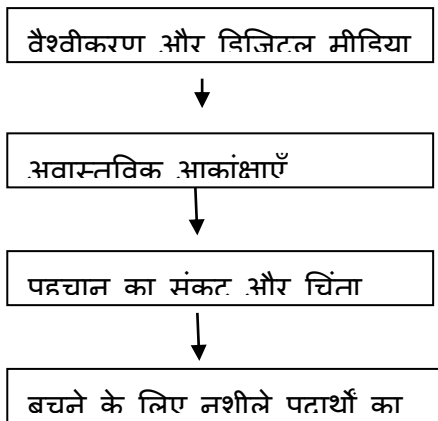
5.4 उदारीकरण, डिजिटल संस्कृति एवं पहचान संकट

परिणाम 4

1990 के बाद युवाओं में तनाव की प्रकृति में महत्वपूर्ण परिवर्तन आया है—

- तनाव अब केवल आर्थिक नहीं, बल्कि मानसिक एवं पहचान-संबंधी भी है।
- सोशल मीडिया एवं उपभोक्तावाद ने “तुलनात्मक जीवन-शैली” को बढ़ावा दिया है।

सैद्धांतिक निरूपण (पाठ्यात्मक ग्राफ):



विमर्श 4

यह निष्कर्ष बेक के जोखिम समाज सिद्धांत के अनुरूप है, जहाँ राज्य की जिम्मेदारी घटती जाती है और जोखिम प्रबंधन का बोझ व्यक्ति पर डाल दिया जाता है। ऐसी स्थिति में मादक द्रव्य सेवन युवाओं के

लिए अस्थायी मानसिक राहत का साधन बन जाता है।

5.5 क्षेत्रीय एवं समाजिक-आर्थिक विविधताएँ

परिणाम 5

द्वितीयक आंकड़ों से यह स्पष्ट हुआ कि मादक द्रव्य सेवन की व्यापकता समाजिक-आर्थिक स्थिति के अनुसार भिन्न-भिन्न है:

वर्ग/क्षेत्र	प्रमुख तनाव कारक	प्रमुख मादक द्रव्य
शहरी मध्यम वर्ग	करियर दबाव, प्रतिस्पर्धा	शराब, सिंथेटिक ड्रग्स
ग्रामीण युवा	बेरोजगारी, प्रवासन	तंबाकू, शराब
हाशिए पर स्थित समूह	सामाजिक बहिष्करण	सस्ते नशीले पदार्थ

विमर्श 5

यह परिणाम इस तर्क को सुदृढ़ करता है कि मादक द्रव्य समस्या “एक-समान समाधान” वाली समस्या नहीं है। नीति-निर्माण में क्षेत्रीय एवं वर्गीय विविधताओं को सम्मिलित करना अनिवार्य है।

5.6 राज्य की प्रतिक्रिया: नियंत्रण बनाम देखभाल

परिणाम 6

राज्य की नीतियाँ मुख्यतः कानूनी एवं चिकित्सकीय दृष्टिकोण पर आधारित पाई गईं।

नीति	दृष्टिकोण	सीमाएँ
एनडीपीएस अधिनियम (1985)	दंडात्मक	संरचनात्मक कारणों की उपेक्षा
मानसिक स्वास्थ्य कार्यक्रम	चिकित्सकीय	सामाजिक संदर्भ का अभाव

विमर्श 6

फूको की *गवर्नमेंटैलिटी* की अवधारणा के अनुसार, राज्य मादक द्रव्य उपयोग को एक “नियंत्रण की समस्या” के रूप में देखता है, न कि एक ऐतिहासिक-समाजिक संकट के रूप में। इससे नीतियों की प्रभावशीलता सीमित हो जाती है।

5.7 प्रमुख निष्कर्षों का समेकन

संपूर्ण परिणाम

1. युवाओं का तनाव एवं मादक द्रव्य सेवन ऐतिहासिक रूप से निर्मित समाजिक प्रक्रियाएँ हैं।
2. औपनिवेशिक एवं नव-उदारवादी संरचनाओं ने इस संकट को और गहरा किया है।
3. राज्य की नीतियाँ कारणों के बजाय लक्षणों पर केंद्रित हैं।

संपूर्ण विमर्श

यह अध्ययन दर्शाता है कि भारतीय युवाओं में मादक द्रव्य सेवन को केवल एक मनोवैज्ञानिक विकार के रूप में नहीं, बल्कि आधुनिक राष्ट्र-राज्य की ऐतिहासिक विफलताओं के परिणामस्वरूप उत्पन्न सामाजिक समस्या के रूप में समझा जाना चाहिए।

6. निष्कर्ष

यह शोधपत्र स्पष्ट करता है कि समकालीन भारत में युवाओं के बीच मनोवैज्ञानिक तनाव और नशीले पदार्थों के सेवन की समस्या को आधुनिक राष्ट्र-राज्य के ऐतिहासिक विकास से अलग करके नहीं समझा जा सकता। ऐतिहासिक-सैद्धांतिक दृष्टिकोण को अपनाते हुए यह अध्ययन दर्शाता है कि युवाओं में नशीली पदार्थों का सेवन केवल किसी व्यक्तिगत या रोगात्मक विचलन का परिणाम नहीं है, बल्कि यह दीर्घकालिक राजनीतिक, आर्थिक और सांस्कृतिक परिवर्तनों में निहित एक संरचनात्मक रूप से निर्मित सामाजिक परिघटना है। औपनिवेशिक काल में नशीले पदार्थों के व्यावसायीकरण और आर्थिक विस्थापन से लेकर, स्वतंत्रता-उत्तर विकासात्मक दबावों तथा नवउदारवादी वैश्वीकरण से उत्पन्न अनिश्चितताओं तक, प्रत्येक ऐतिहासिक चरण ने भारतीय समाज में युवाओं के तनाव के स्रोतों और उसकी तीव्रता को नए रूप में पुनर्संरचित किया है।

अध्ययन के निष्कर्ष यह पुष्टि करते हैं कि आधुनिकीकरण, प्रतिस्पर्धी शिक्षा प्रणाली, बेरोज़गारी तथा बदलती सामाजिक अपेक्षाओं ने युवाओं के बीच मनोवैज्ञानिक दबाव को व्यवस्थित रूप से बढ़ाया है। शास्त्रीय समाजशास्त्रीय सिद्धांत—दुर्खीम का एनोमी सिद्धांत, मर्टन का तनाव सिद्धांत तथा बेक का जोखिम समाज सिद्धांत—सामूहिक रूप से यह स्पष्ट करते हैं कि सामाजिक नियंत्रण की कमजोरी, अवसरों तक असमान पहुँच और जोखिम प्रबंधन का व्यक्ति-केंद्रित स्वरूप किस प्रकार युवाओं को तनाव से निपटने के उपाय के रूप में नशीले पदार्थों की ओर प्रवृत्त करता है। भारतीय संदर्भ का विश्लेषण यह भी उजागर करता है कि क्षेत्रीय और सामाजिक-आर्थिक स्तर पर उल्लेखनीय भिन्नताएँ विद्यमान हैं, जो यह दर्शाती हैं कि नशीली पदार्थों की समस्या वर्ग, रोज़गार की स्थिति और सामाजिक बहिष्करण की संरचनाओं में गहराई से निहित है।

राज्य की प्रतिक्रियाओं के विश्लेषण से नियंत्रण-उन्मुख नीतियों और युवाओं के वास्तविक जीवन अनुभवों के बीच एक गंभीर अंतर स्पष्ट होता है। एनडीपीएस अधिनियम जैसे कानूनी ढाँचे तथा संकीर्ण जैव-चिकित्सीय मानसिक स्वास्थ्य कार्यक्रम तनाव और नशे की समस्या के लक्षणों पर तो ध्यान देते हैं, किंतु इसके संरचनात्मक कारणों को संबोधित नहीं कर पाते। इस अर्थ में, आधुनिक भारतीय राज्य ने युवाओं में नशीली पदार्थों के सेवन को रोकथाम और देखभाल की अपेक्षा अधिकतर विनियमन और अनुशासन के माध्यम से शासित किया है।

अंततः, भारत में युवाओं के तनाव और नशीली पदार्थों के सेवन की समस्या से प्रभावी ढंग से निपटने के लिए ऐतिहासिक रूप से सूचित, सांस्कृतिक रूप से संवेदनशील और मनोवैज्ञानिक रूप से सुदृढ़ हस्तक्षेपों की आवश्यकता है। नीतियों को दंडात्मक और व्यक्ति-केंद्रित दृष्टिकोण से आगे बढ़कर ऐसी समन्वित रणनीतियों की ओर अग्रसर होना चाहिए, जिनमें मानसिक स्वास्थ्य सहायता, शैक्षिक सुधार, रोज़गार सृजन और समुदाय-आधारित सामाजिक समर्थन को सम्मिलित किया जाए। केवल राष्ट्र-राज्य की ऐतिहासिक ज़िम्मेदारियों को स्वीकार करके ही युवाओं के तनाव और नशीली पदार्थों के सेवन की समस्या के स्थायी और प्रभावी समाधान संभव हो सकते हैं।

7. संदर्भ

1. Durkheim, É. (1897). *Suicide: A Study in Sociology*. Free Press
2. Arnold, D. (1988). *Imperial Medicine and Indigenous Societies*. Manchester University Press.
3. Basu, A. (2013). *Politics of Drug Control in India*. Oxford University Press.
4. Merton, R. K. (1938). "Social Structure and Anomie." *American Sociological Review*, 3(5).
5. Beteille, A. (2002). *Inequality and Social Change*. Oxford University Press.
6. Beck, U. (1992). *Risk Society: Towards a New Modernity*. Sage Publications.
7. Foucault, M. (1978). *The History of Sexuality, Vol. 1*. Pantheon Books.
8. Government of India. (1985). *The Narcotic Drugs and Psychotropic Substances Act, 1985*. New Delhi: Ministry of Law and Justice.
9. Durkheim, É. (1897). *Suicide: A study in sociology*. Free Press.
10. Government of India. (2014). *National Mental Health Programme*. Ministry of Health and Family Welfare.
11. Giddens, A. (1991). *Modernity and Self-Identity*. Polity Press.
12. WHO (2014). *Preventing Suicide: A Global Imperative*.
13. UNODC (2021). *World Drug Report*.
14. Hawkins, J. D., et al. (1992). Risk factors for adolescent substance abuse. *Psychological Bulletin*, 112(1).
15. Sinha, R. (2008). Chronic stress and drug abuse. *Annals of the New York Academy of Sciences*.
16. Clinard, M. B., & Meier, R. (2016). *Sociology of Deviant Behavior*. Cengage.
17. Deshpande, S. (2017). *The Problem of Caste*. New Delhi: Orient Blackswan.
18. Sinha, R. (2001). How does stress increase risk of drug abuse and relapse? *Psychopharmacology*, 158(4), 343–359.
19. Mills, J. H. (2000). *Substance Use and Colonial India: Social and Cultural Perspectives*. New Delhi: Oxford University Press.
20. Gangrade, K. D. (1978). *Social problems in India: Vol. II: Drugs and drug abuse*. Bombay: Popular Prakashan.
21. Prakash, B. (1999). *Substance use and social change in India*. New Delhi: Rawat Publications.
22. Kothari, R. (1989). *Education and development in India*. Delhi: Orient Longman.
23. Rudolph, L. I., & Rudolph, S. H. (2001). *Essays on modern India: Continuity and change*. Oxford University Press.

24. Fernandes, L. (2006). *India's New Middle Class*. University of Minnesota Press.
25. NCRB (2022). *Crime in India Report*. Government of India.
26. Verma, S., & Saraswathi, T. S. (2002). *Adolescence in India: Street, school and village*. New Delhi: Sage Publications.
27. Lukose, R. (2009). *Liberalization's Children*. Duke University Press.
28. Twenge, J. (2017). *iGen*. Atria Books.
29. Patel, V., et al. (2018). The Lancet Commission on Global Mental Health. *The Lancet*.